गुरुवाणी

सिर्फ बोलने से कुछ नहीं होने वाला, आज कर्म करने की जरूरत है। कर्मशील व्यक्ति ही पूजे जाते हैं।

–पीठाधीश्वर बाबा सिद्धार्थ गौतम राम जी

अघोरेश्वर निनाद

अघोरान्ना परो मंत्रो। नास्ति तत्वम् गुरोः परम्।।

R.N.I.UPHIN-2000/3008 Postal No. VSI-E-01/2013-2015

वर्ष-१५, अंक २४, वाराणसी। बुधवार ३० दिसम्बर २०१५ ई० सहयोग राशि ४.२५

मंत्र

मंत्र शब्द समूहों का ऐसा समुच्चय है जिसके उच्चारण से अन्तश्चेतना में जागरण का स्फुरण होता है जिससे शक्ति की प्राप्ति होती है एवं मंत्र धारक व्यक्ति की शक्ति समुन्नत होकर निरन्तर समृद्धशाली होती जाती है। अन्तत: एक चमत्कारिक प्रभाव का मनुष्य में प्रादुर्भाव होता है। ईश्वर, जीव, प्रकृति के स्वरूप एवं उनके आपसी सम्बन्धों के अन्त:प्रेरणा का भाव जब मानव हृदय में उत्पन्न होता है तो वह मंत्र का आश्रय लेता है। जिसमें मंत्र उच्चारक का अटूट श्रद्धा एवं विश्वास जुड़ा होता है। मंत्र उच्चारण के पूर्व ही स्वमेव एकाग्रता, ध्यान, धारणा की ओर हम अग्रसर होते हैं जिससे मंत्र का प्रभाव पृथ्वी, अन्तरिक्ष, अग्नि, विद्युत आदि-आदि कई रूपों में अनुभव होता है। जिससे हम भाव विभोर होकर संवेदनशील हो जाते हैं। मंत्र के प्रभाव में हमारी सुषुप्त शक्तियाँ जागृत हो उठती है। जिससे आत्मा से परमात्मा यानी ईश्वर के मिलन की अनुभूति प्राप्त होती है। अत: हम कह सकते हैं कि मंत्र ध्वनि तरंगों का ऐसा वैज्ञानिक समायोजन है जिससे अनन्त मात्रा में सकारात्मक ऊर्जा नि:सरित होती है एवं व्यक्ति के परिवेश, वातावरण इच्छानुकूल परिवर्तन अवश्यम्भावी है। मंत्र के उच्चारण से सीधे फल प्राप्त होता है। हमारे युग ऋषियों, मनीषियों के द्वारा मंत्र का आविष्कार किसी वैज्ञानिक आविष्कार से बहुत अधिक प्रभावी है। जो व्यक्ति विशेष के सोच पर भी प्रभाव डालता है एवं मंत्र से सीधे फल की प्राप्ति होती है। कहा गया है कि ''मननात् त्रायते इति मन्त्र:'' यानी जिसके मनन से त्राण मिले, वही मंत्र है। कहने का तात्पर्य यह है कि व्यक्ति जीवन के चाहे जिस क्षेत्र से सम्बन्ध रखता हो, उसे अनुशासनबद्ध होकर मर्यादित जीवन-यापन करने में अपूर्व सुख का अनुभव होता है। इन्द्रियजन अनावश्यक सुख उसे डिगा नहीं सकते। ऐसी ही उसके आत्मिक शक्ति का विकास हो जाता है। इसके विपरीत जो व्यक्ति जिह्वा के स्वाद के लिये अपने तीन हाथ के शरीर को बिगाड़ लेता है वह विचारवान पुरुष नहीं कहा जाता। क्योंकि कुपथ्य उसका मार्ग अवरुद्ध कर देते हैं एवं रसेन्द्रिय एवं जननेन्द्रिय के वशीभूत होकर व्यक्ति अपना अमूल्य जीवन चौपट कर लेता है। मनुष्य को शुद्ध मंत्रोच्चारण से न केवल आन्तरिक स्थिति में परिवर्तन आता है, बल्कि उससे आत्मिक शक्ति का विस्तार होता है। तुलसीदास जी के द्वारा श्रीरामचरितमानस में उद्धृत हैं कि- ''तुलसी रा के कहत हि निकसत पाप पहार, जौ निकसै आवन नहीं देत मकारिक बार।''

वैज्ञानिकों द्वारा भी यह सिद्ध किया जा चुका है कि राम अथवा एकाक्षर मंत्र ॐ तथा पंचाक्षर मंत्र ॐ नम: शिवाय के उच्चारण से बुद्धि निर्विकार हो जाती है जिससे परमात्मा से संवाद स्थापित हो जाता है। परम पूज्य भगवान अवधूत राम जी के द्वारा निरूपित ''सफल योनि'' नामक लघु ग्रन्थ में ''मंत्र'' शब्द का प्रयोग लगभग ३३ बार हुआ है जिससे मंत्र का महत्व दृष्टिगोचर होता है। **''ॐ सच्चिदेकं ब्रह्म''** मंत्र को महामंत्र कहा गया है। जो स्वयं ही सिद्ध है। जिसमें प्रणव ॐ के उच्चारण के साथ ही सच्चिदानन्द परब्रह्म परमेश्वर के एकात्म अद्वैत रूप को याद करते हुए उनके अखण्ड विभूषित प्रभाव का अनुभव किया जाता है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी ॐ के उच्चारण से मनुष्य की प्रत्येक कोशिकाओं में अभिवृद्धि होकर कार्यक्षमता बढ़ती है। मनुष्य के मेरूदण्ड पर ॐ ध्वनि का बड़ा सकारात्मक प्रभाव पड़ता है जिससे मनुष्य न केवल शारीरिक रूप से स्वस्थ रहता है बल्कि उसका अंग प्रत्यंग भी सबल बनता है। दृष्टान्त स्वरूप थाइराइड ग्रन्थि सचेत होकर सकारात्मक कार्य करती है। साथ ही मस्तिष्क भी उक्त उच्चारण से सक्रिय होकर अत्यधिक कार्य करने में सक्षम होता है। उसी प्रकार प्राणायाम से भी मस्तिष्क का बायाँ भाग जिसमें सोचने, समझने की शक्ति परमात्मा के द्वारा समाहित की गयी है प्राणवान् बनता है। जिससे व्यक्ति में कुण्ठा, आत्महीनता व असुरक्षा की भावना समाप्त होती है। उक्त महामंत्र में प्रकृति की सारी शक्तियाँ समाहित है। आकाश, जल, वायु, पृथ्वी, अग्नि के समस्त अवयवों का निचोड़ मंत्रों में समाहित किया गया है। अघोर गायत्री मंत्र भी हर तरह के विकार को नाश कर व्यक्ति को निरन्तर सन्मार्ग पर निरन्तर चलते रहने की प्रेरणा देता है।

मंत्र का सदुपयोग करने वाले साधक को सर्वप्रथम अपने को ही उपयुक्त बनाना पड़ता है। उसे स्वयं के सोच, चाल-चलन मन:स्थिति आदि में परिवर्तन कर मंत्र को धारण करना पड़ता है जिससे वक्रता की कोई गुंजाइश नहीं होती एवं मनुष्य को संकल्प करने की प्रेरणा प्राप्त होती है। जैसे सोये हुए व्यक्ति को दिवाकर का प्रकाश मिल गया हो जिससे उसके शिथिलता एवं प्रमाद का नाश हो गया हो। मंत्रों की सर्वमान्य साधना ''सर्वे भवन्तु सुखिन:'' की भावना पर ही आधारित होती है। जिससे ईश्वर उपासना, आत्मचिन्तन, स्वाध्याय, संतों की अमृतवाणी सुनने एवं तद्नुसार आचरण करने का पुरुषार्थ प्राप्त हो जाता है। मंत्र हार्दिक उपासना है जिसे अनादिकाल से ऋषि, मुनि, महात्मा, धर्म प्रवर्तकों द्वारा अपनी वाणी को देवतागण या परमात्मा तक पहुँचाये जाने की परम्परा रही है। सच्चे हृदय से प्रार्थना भी मंत्र की भांति कार्य करती हैं। महात्मा गांधी कहा करते थे ''प्रार्थना मेरा जीवन हैं। मैं भोजन छोड़ सकता हूँ, संसार की सारी चीजें छोड़ सकता हूँ परन्तु प्रार्थना नहीं छोड़ सकता हूँ। प्रार्थना करने से मैं अपने अन्दर एक सुख, शान्ति, शक्ति और सम्पूर्णता का अनुभव करता हूँ।'' जिस दिन प्रार्थना में बिलम्ब हो जाता है या किसी कारणवश

शेष पृष्ठ दो पर

नववर्ष की हार्दिक शुभकामना

नवागत वर्ष के शुभ अवसर पर समस्त अघोर भक्तों एवं अघोरेश्वर निनाद के पाठकगणों का हम हार्दिक अभिनन्दन करते हैं। नववर्ष में आप सभी के उज्ज्वल-भविष्य की मंगल शुभकामना के साथ परम वन्दनीय अघोराचार्य बाबा सिद्धार्थ गौतम राम जी महाराज जी से प्रार्थना करते हैं कि हम सभी भक्त जनों के जीवन में हर्ष एवं उल्लास का संचार हो और नवीन उत्साह और लगनशीलता हमारे अन्तर्मन में निरन्तर बढ़ती जाय।

सद्गुरु तत्त्व महिमा

कहा गया है कि—

यह तन विष की बेलरी, गुरु अमृत की खान।
शीश दिये जो गुरु मिलैं, तो भी सस्ता जान।।

यानी गुरु तत्त्व की प्रत्येक जागरूक व्यक्ति के जीवन में अपरिहार्य आवश्यकता होती है। लौकिक ज्ञान से लेकर परलौकिक सिद्धि एवं उद्धार हेतु गुरु की जरूरत है। माता को संतान का प्रारम्भिक गुरु कहा जाता है। तत्पश्चात् औपचारिक शिक्षा के गुरु का भी स्थान आता है। तदोपरान्त हम संवेदनशील होकर आध्यात्मिक गुरु की खोज हेतु आतुर होते हैं। जिससे हमारा संस्कार परिमार्जित एवं परिष्कृत होता है। गुरु के नेत्रपात एवं आभा मंडल के विकिरण से ही सच्चे शिष्य के जीवन में वैचारिक परिवर्तन घर करने लगता है। उसमें शक्ति संबल एवं सत्पथ पर चलने की क्षमता स्वमेव विकसित होने लगती है। वह परिवार, समाज में एक सच्चे पथ प्रदर्शक की भांति गुरु के चरणों की प्रखरता के प्रभाव से हमेशा भाव विभोर रहता है। वह गुरु से कुछ माँगने की स्थिति में नहीं रहता। क्योंकि सद्गुरु माँ गुरु के रूप में उसे अनचाहे भी वह सब उपलब्ध करा देते हैं जिसकी उसे वास्तव में आवश्यकता है। विशेष तथ्य यह है कि औघड़ सद्गुरु न केवल योग्य एवं सत्पात्र को बल्कि निकृष्ट कोटि के शिष्यों को भी उत्कृष्ट कोटि में बदलकर तदनुसार आचरण करने की प्रेरणा दे देते हैं। यह भी सर्वमान्य तथ्य है कि सद्गुरु सदैव अपने शिष्यों के पीछे चट्टान की भांति खड़े रहते हैं। अपने शिष्यों को वे कभी अपने प्रभामंडल से ओझल नहीं देते।

अधुनातन आपाधापी बढ़ती हुई भौतिकवादिता के क्रम में सद्गुरु की आवश्यकता और भी बढ़ जाती है। अन्यथा समाज अनुशासनहीन एवं निरंकुश होकर छिन्न-भिन्न होने पर उद्यत हो जाता है। आपसी एकता एवं भाईचारा में कमी हो जाती है। यह वर्तमान समय की चुनौती है जिसका सामना सद्गुरु के प्रभाव से ही किया जा सकता है। तुलसीदास जी ने कहा है-

जानै बिन न होहिं परतीति, बिन परतीति होहिं नहीं प्रीति।

ऐसे में वर्तमान जनमानस पर भी यह बड़ा दायित्व है कि सद्गुरु को कैसे जाने एवं पहचाने? लेकिन इसका बड़ा सरल उपाय है जब आप स्वयं से हार जायें, यानी आपका आत्मबल, पुरुषार्थ, बुद्धि बल, साहस, सामर्थ्य समाप्त हो जाये तो द्रौपदी की भांति हृदय से आपकी पुकार आपके सद्गुरु को आपके रक्षार्थ दौड़ा देगा। जब ग्राह के जबड़े में आकर गज ने आर्त्त होकर श्रीकृष्ण को पुकारा तो वे तत्क्षण दौड़े चले आयें। जैसे वे उसकी पुकार की प्रतीक्षा में हों। कहने का तात्पर्य यह है कि जहाँ व्यक्ति शक्ति शून्य हो जाता है, असहाय हो जाता है। वही से सद्गुरु की कृपा प्रारम्भ होती है। जैसे कोई वात्सल्यमयी माँ अपने बच्चे को अंगुली पकड़ाकर इस ध्येय से चलाती हैं कि बच्चा शीघ्रातिशीघ्र अपने पैरों पर खड़ा हो सके, चल सके। परन्तु यदि बच्चा थककर रोने या गिरने लगता है तो सजग माँ, (माँ गुरु) आनन-फानन में तुरंत बच्चे को गोद में उठाकर दुलार, पुचकार कर पुन: शक्ति से भर देती है। साथ ही सद्गुरु अपने शिष्य के प्रत्येक कार्य पर सतत् दृष्टि भी बनाये रखते हैं। जिससे उसका कल्याण होता रहे।

C-अघोराचार्य बाबा कीनाराम अघोर शोध एवं सेवा संस्थान् के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक **अरुण कुमार सिंह** द्वारा महादेव प्रेस, बी.3/335, रविन्द्रपुरी कॉलोनी, भेलूपुर, वाराणसी (उ0प्र0) से मुद्रित एवं प्रकाशित।

सम्पादक : चन्द्र नाथ ओझा

ग्राफिक्स : आशीष कुमार बरनवाल

☎ **0542-2277155.**
e-mail–kinaram@rediffmail.com
www.aghorpeeth.org

प्रथम पृष्ठ का शेष

मंत्र

नहीं कर पाता हूँ वह दिन मेरे लिये सबसे खराब दिन होता है, मुझे लगता है कि मैं निर्जीव हो गया हूँ, असक्त हो गया हूँ, न मैंने कुछ किया है और न कुछ कर सकता हूँ। अपने अन्दर एक भयानक खोखलापन पाने लगता हूँ और प्रार्थना कर लेने पर तत्काल सारी दुर्बलतायें दूर हो जाती हैं तथा अपने अन्दर फिर पूर्णता का अनुभव करने लगता हूँ। मैं सारे दु:ख, सारे कष्ट और सारे संघर्ष प्रार्थना के बल पर ही हँसते-हँसते सहन कर लेता हूँ। मुझे कभी आभास भी नहीं होता कि मैं किसी संघर्ष अथवा दु:ख में हूँ। इस प्रकार से प्रसन्न और प्रफुल्लित रहता हूँ।''

उपर्युक्त से स्पष्ट है कि एक सच्चे तपस्वी का दृढ़विश्वास अपनी मंत्र साधना के प्रति कैसे कार्य करता है। मंत्र उच्चारण करते-करते जब चित्त परिमार्जित हो जाता है तो वह बार-बार मांजते रहने के पश्चात् एक चमकते हुए पात्र की भांति हो जाता है। यद्यपि जब चित्त परिमार्जित होने का क्रम शुरू होता है तो नाना प्रकार के उथल पुथल एवं मार्गरोधक शक्तियाँ उसमें रोड़ा बनकर आती हैं। सामान्य मनुष्य विचलन का अनुभव करता है। बड़े-बड़े ज्ञानियों को भी निराशा के गर्त में जाते हुए देखा गया है। परन्तु जो साहसी व्यक्ति हैं अपने श्रद्धा, भक्ति एवं दृढ़ विश्वास से अपने गुरु के वचनों के प्रति दृढ़ रहता हैं वे सहज में ही मंत्र का फल प्राप्त कर लेते हैं। मंत्र के पूर्व प्राणायाम किये जाने की भी परम्परा है। जिससे व्यक्ति अपने को हर प्रकार से सुसज्जित कर परिष्कृत कर लेता है और **''अभिमानदम्भादिकं त्याज्यम्।''** के पथ पर चलकर अभिमान, दम्भ, पाखण्ड, बनावटीपन का आश्रय बिल्कुल छोड़ देता है। मंत्र के उच्चारण से जीवन में सम्पूर्णता का भाव आता है तथा व्यक्ति का व्यक्ति पुष्ट एवं सफल बनता है। जिससे स्थायी रूप से आत्मिक उत्थान, आध्यात्मिक उद्धार हो जाता है।

जिस तरह से गर्भ में नवीन जीवन अंकुरित होता है पादप बीज से नवपौध का उद्भव होता है ठीक उसी प्रकार मंत्रों के जपते रहने से हमारी शारीरिक शक्ति, मानसिक शक्ति में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाती है। जैसे वटवृक्ष के बीज में समस्त वृक्ष समाहित रहता है। मंत्रों के उच्चारण में सगुण रूप का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। जिससे साधारण मन:स्थिति का व्यक्ति भी असाधारण अभीष्ट को प्राप्त कर लेता है। विचारों में सतोगुण का आना प्रारम्भ हो जाता है। जिससे विकास यात्रा पर मानव ऊर्ध्व मानस, उद्भासित मानस, अंतर्बोधी मानस, अधिमानस एवं अतिमानस के रूप में प्रगाढ़ होते होते पूर्णिमा की भांति पूर्ण हो जाता है। जिससे न केवल आत्मबल, आत्मविश्वास बढ़ता है बल्कि उसे समस्याओं से जूझने की अपार शक्ति प्राप्त होती है। यदि हम अपने हृदय में अविश्वास व विफलता का विचार ही लाते रहे तो कदापि सफल नहीं हो सकते। जबकि मंत्र के बल पर अपने को कर्मठ कर कर्त्तव्य पथ के कठिन मार्ग पर आगे बढ़ते रहने की भावना से मनुष्य लवरेज होता है एवं परिस्थितियों से हार मानने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। संसार में जितने भी व्यक्तियों ने अपने मनोरथ को पूर्ण किया है। कुण्डलिनी जागरण, ईश्वर दर्शन जैसे दैवीय अनुदानों को प्राप्त किया है। वे निश्चित ही किसी महामंत्र के बल पर ही परम सौभाग्य के अधिकारी बने हैं। यद्यपि मुख से मंत्र का मात्र उच्चारण करना और आत्मवत् सर्वभूतेषु की भावना न होना मंत्र को उतना फलदायी नहीं करता जितना कि उसका प्रभाव होता है। मंत्र से न केवल मनुष्य की विचारणा, भावना, शारीरिक क्रिया कलापों में उचित परिवर्तन होता है। बल्कि मनुष्य अशान्त एवं विकार युक्त विचारों से भी अपने को विरत कर लेने में समर्थ हो जाता है। मंत्र के प्रति समर्पित होने से व्यक्ति के मन में विषयों की अनुभूति आक्रमण नहीं करने पाती तथा वह इन्द्रियजयी होने का सौभाग्य प्राप्त कर लेता है। मंत्र को बारम्बार उच्चारण करने में एक परोक्ष सकारात्मकता का प्रभाव हमारे मानस पटल पर घर कर लेता है। जिसे स्थूल शरीर के इन्द्रियों में कहीं भी विकार टिक नहीं पाता तथा व्यक्ति हर तरह से अपने मार्ग पर सामर्थ्यवान होकर के आगे बढ़ता जाता है। उसका मन **''ज्ञानं हि तेषांधिको विशेष:''** से इतर उचित अनुचित की विशेषताएँ सोच कर अपने को श्रेष्ठतम प्राणी सिद्ध कर सृष्टि संचालन के नियमित व्यवस्था में सहयोगी बनता है। मंत्रोच्चारण से व्यक्ति में विशिष्ट शक्ति का प्रादुर्भाव होता है एवं अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु वे डिगने का नाम नहीं लेते। उनमें कार्य के प्रति तल्लीनता, लगन और तत्परता इस कदर हो जाती है कि वे हर हालत में उसे पूरा करके ही मानते हैं। भय, क्रोध मनुष्य के स्वाभाविक वृत्तियों में मानी जाती है किन्तु वह भय उसे सकारात्मकता, सतर्कता की ही ओर अग्रसर करता है। मरने से कौन नहीं डरता, परन्तु मंत्र में मृत्यु से बचने एवं उसे टालने का हरसंभव उपाय समाया रहता है। हम भली भांति अवगत है कि मृत्यु के मुख से निकालने में महामृत्युंजय मंत्र अनादिकाल से प्रयुक्त होता आया है।

शेष पृष्ठ तीन पर

मंत्र

द्वितीय पृष्ठ का शेष

प्राचीनकाल से ही सर्पदंश, बिच्छुदंश इत्यादि की पीड़ा को हरने के लिये हम सदा से मंत्र का आश्रय लेते हैं। इसका वैज्ञानिक आधार यह है कि मंत्र से व्यक्ति के शरीर पर वह प्रभाव पड़ता है जिससे विष का समन अपने आप होता जाता है। हम भली भांति अवगत है कि गीत-संगीत से मनुष्य पर काफी प्रभाव पड़ता है। बच्चों को भी लोरी सुनाकर माताएँ सुलाती आयी हैं यानि ध्वनि का प्रभाव अनादिकाल से मनुष्य के शरीर पर पड़ता हुआ देखते आये हैं यानी ध्वनि साउण्डोपैथी से हम मन:स्थिति को साधने की दवा कर लेते हैं। जिससे ऋषि, मुनियों ने अधिकारिक रूप में हमें प्रदान किया है।

संगीतज्ञों द्वारा भी मधुर स्वर लहरियों से व्यक्ति को चाहे वह बच्चा, जवान अथवा बूढ़ा हो, सबके अन्तर्मन पर गहरा प्रभाव डाले जाने हेतु रागों का आविष्कार किया गया है। जैसे भूपाली राग और मारवा राग से आंतों के रोगों में फायदा होता है। रामकली, सारंग, मुलतानी रागों से क्षय के रोगों में फायदा होता है। बसंत और सोरठी राग से नपुंसकता दूर होती है और आसावरी राग से सिर के दर्द या रोग ठीक होते हैं। इस प्रकार राग ध्वनियों का मनुष्य के शरीर पर प्रभावोत्पादक प्रभाव पड़ता है। जिससे मनुष्य को मनचाही शान्ति एवं शक्ति प्राप्त होती है। मंत्र के आधार पर प्रार्थना, पूजा हमें प्रारम्भ से ही शुकून व शान्ति देने लगता है। बशर्ते कि मानव आराम से सहज अवस्था में उसका अनुपालन करता रहें। मंत्र का प्रभाव जादुई होना पाया गया है। पूरे शरीर पर राग एवं लय में रच बसकर स्तुतियों के रूप में देवी-देवताओं को रिझाने हेतु कार्य में प्रयुक्त होते हैं।

मंत्र की महिमा एवं गुणों का बखान शब्दों में नहीं किया जा सकता। यह मनुष्य को प्रकृति का महामानवों का अति अनुपम वरदान है। ऋषि, मुनि मंत्र के बल पर ही न केवल मनुष्यों का कल्याण करते थे बल्कि अपने को ही समाज के सुधारक के रूप में स्थापित करते थे। वे व्याकुल मानवता को मंत्र बताकर उसे शान्ति के लिये निहितार्थ होता है। मंत्रोंच्चारण की शक्ति को श्रद्धा, निष्ठा से बढ़ाने एवं अपने इष्ट के शरणागति में मनुष्य को निरन्तर समर्पण हेतु प्रेरणादायी समझा जाता रहा है। मंत्र के उच्चारण से प्रभु को भक्त की आवाज शिशु के द्वारा अपने माँ को पुकारने के समान माना जाता है। जैसे माँ अपने गोद में आने के लिये आतुर बच्चे को तुरंत उठा लेती है उसी प्रकार महामंत्र के जपने से, ऊर्ध्वगमन करने से, नियमानुसार जप-तप, अनुष्ठान करने से जीवन सहज, संवर जाता है। मंत्रोच्चारक की प्रखर साधना से न केवल उसका अन्तस धन्य होता है। बल्कि अंग प्रत्यंग पवित्र होकर आनन्द एवं उल्लास के साथ जीवन हिलोरे लेने लगता है। मंत्र की शक्ति से अपने आस-पास चारों ओर का वातावरण सुधरता है। जिससे समाज पतित होने से बच जाता है। इसका आभास हम सबको होता रहता है। जिससे हमारे कल्याण का मार्ग सुनिश्चित रूप से प्रशस्त होता है। मंत्र के पावन उच्चारण से त्रिविध ताप एवं भवदाप से व्यक्ति बच जाता है। वह परोपकारी, दानी एवं उपकारी के समस्त गुणों को अवधारित करने लगता है।

कभी-कभी कुछ तपस्वी अपने को तांत्रिक बताकर जनमानस को अपनी ओर आकर्षित करते हैं एवं वे कुछ भी करने में अपने को समर्थ बताते हैं। इस प्रकार बहुधा तांत्रिकों द्वारा मंत्र के बल पर विध्वंसात्मक कार्यों में भी हाथ बटाये जाने का उपक्रम किया जाता है। ऐसे लोग स्वत: ही उद्विग्न हो जाते हैं तथा दूसरे के प्रति वशीकरण, मारण, उच्चाटन इत्यादि क्रियाएँ कर अपने जीवन में विष घोल लेते हैं तथा समाज में वितण्डा उत्पन्न कर लेते हैं। जबकि तंत्र एवं मंत्र की शक्ति का प्रयोग प्रसन्नता एवं शान्ति में निहित है। सात्विक वृत्ति का आना, निर्भीकता का आना अत्याचार सहन न करना तपस्वियों के रग-रग में समायी रहती है। सदाचारी व्यक्ति सदैव मंत्र से स्वयं का कल्याण करने के साथ ही परहित हेतु भी सजग रहते हैं। वे सभी क्षेत्रों में सशक्त एवं योग्य बने रहते हैं। उनका कार्य के प्रति समर्पण एवं अपने भोगों को काटने का साहस भी हृदय में बना रहता है। उन्हें अंधविश्वास पर बिल्कुल ही विश्वास नहीं रहता है बल्कि वे अपने मंत्र के मनन चिन्तन से प्रभु का आलिंगन प्राप्त कर लेते हैं। उन्हें शक्ति सामर्थ्य सहज ही प्राप्त हो जाता है। यद्यपि तंत्र भी एक विद्या है, परन्तु तंत्र का प्रयोग जगत कल्याण के लिए करना चाहिए न कि खतरनाक अपने स्वार्थ सिद्धि एवं अपने महत्वाकांक्षा की पूर्ति हेतु जिससे वह दुरुपयोग कर समाज में संशकित हो जाता है। अत: इस श्रेष्ठ विद्या का सदुपयोग सत्पात्रों के द्वारा किया जाना चाहिए। जिससे सत्कर्म का बीज उगे एवं समाज में एक अच्छाई का वातावरण उत्पन्न करें।

मंत्र की शक्ति से व्यक्ति आध्यात्मिक रूप से बलिष्ठ हो जाता है वह चंचल विचारों पर विजय पाकर विरोधी एवं इन्द्रियों के विषयी विषयों से विरत रहता है। उसका मन भटकने से दूर रहता है। उसका चित्त परिष्कार की तरफ लग जाता है। जिससे जीवन भर वह न कहीं उलझता है और न कहीं खाई में गिरता है। फलत: उसकी मन:शक्ति अति परिष्कृत होकर उच्चस्तरीय ईश्वरीय हो जाती है। मंत्र के प्रयोग से मन स्वच्छ बन जाता है। भगवान के स्मरण एवं भक्ति से चित्त निर्मल बना रहता है। यद्यपि भूतकाल के कठिन एवं कड़ुवे अनुभव यदा कदा उसके विवेक पर प्रतिघात करते रहते हैं। परन्तु मंत्र के बल पर वह लगातार ऐसी विपरीतताओं पर विजय पाकर समस्याओं से छुटकारा पा जाता है। मंत्र धारक व्यक्ति मंत्र के उच्चारण से अपने भोग को काटता है तथा शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य का पोषक बनता है।

मंत्रोंच्चारण के पूर्व ही अघोरेश्वर या ईश्वर की प्रार्थना हो जाती है, जिसमें हम एकाग्र, एकनिष्ठ एवं समर्पण की भावना से यही चाहते हैं कि हमें सुख, समृद्धि, शान्ति एवं स्वास्थ्य की प्राप्ति हो; इस भावना के प्रतिक्रिया स्वरूप सकारात्मक शुभ शक्तियाँ हमारी ओर आकर्षित होती है तथा हमारे अन्दर विलक्षण परिवर्तन होने लगता है। जिसमें हम सांसारिक विकारों को छोड़ने में ही आनन्द का अनुभव करने लगते हैं। जैसे परिश्रम एवं पसीना बहाने के कार्य के पश्चात् व्यक्ति को सुखद नींद की अनुभूति होती है, इसके साथ ही यदि हम मंत्र का आह्वान करें तो यह सीधे दैवीय शक्तियों को आमंत्रण के तुल्य होता है, हमारे मंत्र जितने ही सरल भाव से शुद्ध-बुद्ध होकर परमात्मा तक पहुँचते हैं, उतनी ही अधिक परिणाम हमें प्राप्त होता है जिससे सहज में ही सत्कर्म में हम प्रेरित होकर अपने को प्रणिपात करके अपने शुभ कर्मों के प्रति सचते हो उठते हैं। मंत्र साधना या मंत्र सिद्धि के उपरान्त व्यक्ति का अहंकार सस्ते बाजीगरी के लिये नहीं होता, बल्कि सत्पात्र को चुनकर अत्यन्त आवश्यकता पर ही उसका इस्तेमाल कर अपने मंत्र की सिद्धि को परमार्थी उपकार के कार्य में खर्च करता है। ऐसे सुपात्र जातकों पर सद्गुरु की विशेष कृपा बनी रहती है जिससे वे अपने सत्कर्म पर स्थिति परिस्थिति में अपने सुदृढ़ मन के भावों के प्रभाव में अटल बने रहते है तथा अन्दर ही अन्दर आत्मा में उन्हें अप्रतिम सुख, आनंद, संतोष के साथ ही साहस, निर्भयता का संबल भी मिल जाता है, जिससे उसे अपने परमार्थिक स्वभाव को और तरासने, पुष्ट करने, बलवान बनाने की सद्य: प्रेरणा अपने आप मिलती ही चली जाती है। जो डायनेमो की भांति उसे पुनर्आवेशित करती रहती है तथा मंत्र के सच्चे उपासकों में कठिन परिश्रम के साथ घंटों घंटों कार्य किये जाने के पश्चात् भी उत्साह प्रफुल्लता बनी रहती है, जबकि इससे वंचित व्यक्ति घंटा दो घंटा कार्य करके भी पहाड़ों की चढ़ाई जैसा अनुभव करते हैं एवं थक कर चूर हो जाते हैं। जैसे एक कमजोर घोड़े को १० किमी की दौड़ भी हाँफने हेतु बाध्य कर देता है।

अस्तु! मंत्र की शक्ति अपरिमित है एवं मंत्रों के शीर्ष पर मुकुट की भांति आशुतोष औघड़ सागर से निकला मंत्र "अघोरानां परो मंत्रों नास्ति तत्वम् गुरो: परम्" अनादि काल से यथावत है। यानी अघोरेश्वर या अघोर के नाम स्मरण की भांति कोई मंत्र नहीं है न तो गुरु की भांति कोई मूल्यवान तत्व ही जगत् में विद्यमान हैं। जो अघोर भक्तों को सहज में ही सौभाग्य से उपलब्ध है।

निर्वाण दिवस

परम आदरणीया माँ महा मैत्रायिनी योगिनी के निर्वाण दिवस पर समस्त श्रद्धालुओं, माताओं, अघोर पथिकों की ओर से परम पूज्यनीया माता जी के चरणों में कोटिश: नमन वन्दन।

परम पूज्यनीया माँ महा मैत्रायिणी योगिनी जी का निर्वाण दिवस प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी दिनांक 13 जनवरी 2016 ई० दिन बुधवार को श्रद्धापूर्वक मनाया जायेगा। प्रात: आरती-पूजन के पश्चात् प्रसाद वितरण एवं दोपहर में भव्य भंडारा का कार्यक्रम निर्धारित है।

इस अवसर पर आप सभी श्रद्धालुजन आमंत्रित हैं।

शोक संदेश

अघोरपीठ बाबा कीनाराम स्थल क्रीं कुण्ड, वाराणसी के अनन्य भक्त श्रीरामचन्द्र सरदार की धर्मपत्नी गौरा देवी का आकस्मिक देहावसान दिनांक 07/12/2015 दिन सोमवार को हो गया।

पूज्य अघोरेश्वर शोक संतप्त परिवार को संबल प्रदान करें।

औघड़ सीमा को उल्लंघन कभी नहीं करते

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी का आशीर्वचन

धर्म बन्धुओं!

इस अघोर पीठ के महाराज श्री कीनाराम जी को प्रणाम करते हुए, इस अवसर पर एकत्र माताओं, धर्म-बंधुओं, आगन्तुकों तथा साधु महात्मा-जन के बीच अपना श्रद्धांजलि पुष्प अर्पित करता हूँ। इस अघोर पीठ के उन महापुरुषों के चरणों में जो श्रद्धांजलि अर्पित की गयी, उन विचारों को बहुत ही शान्ति के साथ आप लोग सुनते रहे। इसे हम अपनी दृष्टि से तपस्या ही कहेंगे। क्योंकि यहाँ के बारे में लोगों की धारणा थी और अभी भी होगी कि यहाँ गाँजा और शराब चढ़ता है और इस मेला में यही पीया जाता है। इससे हमारे स्वास्थ्य और प्रसन्नता में लाभ होगा। शायद रहा हो, क्षणिक-मगर सही ढंग से सोचें तो स्थायी लाभ उसे छोड़ने में हो सकता है।

किस परिस्थिति में महाराज श्री ने उसे ग्रहण किया था, उसके बारे में हम ध्यान नहीं देतें उसे आदर्श मानें तो वह आदर्श नहीं हो सकता। भले कोई साधक-उपासक हैं तो उसके लिए भी एक सीमा है, एक नियम है, एक ढंग है जिसके अनुसार ही उसे साधना में इस्तेमाल कर सकते हैं। हमारी मनोवृत्ति ऐसी हो गयी है कि किसी क्षेत्र में हम उसकी सीमा का ध्यान नहीं रखते, जिसके चलते हम राष्ट्र के प्रति, समाज के प्रति विश्वासघात करते हैं। जो सम्पन्न लोग हैं, जिनके पास साधन है आवश्यकता नहीं रहते हुए खरीद-फरोख्त में लगे हैं। इस तरह हम अकेले सारे बाजार का सामान इकट्ठा कर लें तो बाकी लोगों को कुछ भी मिलना असम्भव हो जायेगा। उस परिस्थिति में भारत सरकार क्या कर सकती है। यह बिल्कुल राष्ट्र के हित की बात नहीं है, समाज के हित की बात नहीं है। हमारे महाराज श्री की यही भावना थी, यही विचार था कि यदि हममें कुछ राष्ट्रीयता है, समाज के प्रति दायित्व है तो हमें इतना तो अवश्य समझ लेना चाहिए कि यदि हमें एक लुंगी की जरूरत है तो हम पाँच लुंगी न लें। पाँच चार लेते हैं तो किसी को उसका अभाव रहेगा और उससे सरकार भी परेशान रहेगी। हम किसी साधु, महात्मा या किसी स्थान के प्रति श्रद्धा रखते हैं तो साथ ही हमारा राष्ट्र और समाज के प्रति भी कर्त्तव्य है।

जहाँ तक औघड़ लोगों का सवाल है, ये लोग तो सागर की तरह एक रस से भरे रहते हैं और वह रस लवण्य रस है जैसे सागर लवण्य रस में है। उसमें भिन्न रस होता ही नहीं हैं। अन्य मत-मतान्तरों में सैकड़ों रस होते हैं पर इसमें एक ही रस, सागर की तरह है। वह रस है- अपने देश और समाज के प्रति उत्तरदायित्व का और जो उस उत्तरदायित्व को समझता है, वह किंकर्त्तव्य विमूढ़ नहीं हो सकता। वह शराब, गाँजा, अफीम पीकर एक दूसरे से प्रदर्शन नहीं करेगा। उसमें अपने साधन-सामग्रियों को आवश्यकमन्द और अधिकारी लोगों को देने के लिए उत्साह होता है। बहुत सी नदियाँ जिस तरह जाकर सागर में मिल जाती हैं, अपना नाम जाति, गोत्र छोड़ देती हैं, सागर का ही नाम, जातिज, गोत्र उसका हो जाता है। इसी तरह इन औघड़ लोगों के संग में आने वाले लोगों को अपना नाम, जाति, गोत्र, धर्म कुछ रह नहीं जाता है और यदि उनके साथ कुछ रह गया है, दिखता है तो समझ आइये, उस सागर से वह दूर है मिलने में।

सागर को आप जानते हैं। उसमें चढ़ाव और घटाव नहीं होता है, वह सीमा का उल्लंघन नहीं करता। इसी तरह जो औघड़, अघोर साधक हैं-वास्तव में सीमा का कभी उल्लंघन नहीं करते, सीमा को कभी नहीं तोड़ते-वो सीमा का आदर करते हैं और उसे सम्मान देते हैं सागर का यह भी गुण है कि सड़े-गले लाशों को, मुर्दों को, जिसमें कोई गति नहीं है, किनारे पर फेंक देगा, वह उन्हें अपने भीतर नहीं रखता। इसी तरह (औघड़) गलत-व्यवहार, गलत-आचरण, झगड़ा करने वालों को अपने बीच नहीं रहने देता। यही कारण है कि कुछ विचित्रता आती है और उनके बारे में बहुत सी किंवदन्तियाँ और जनश्रुतियाँ भी हैं।

आप ही अपने नौकर-चाकर के साथ कुछ ऐसी सोहबत करते हैं, ऐसे लोगों के साथ अधिक रहते हैं तो वह आपके लिए, आपके सामने अभिशाप बन सकता है, उच्चशृंखलता कर सकता है। इसलिए उस वेष-भूषा को औघड़ लोग अपनाये रखते थे कि सड़े-गले, जिनके सड़े गले विचार हैं, उनके साथ मैं नहीं रह सकूँगा, मैं अकेले, निर्द्वन्द्व रहूँगा। जो उसका (सागर का) मानदण्ड है, वह बिल्कुल औघड़-अघोरेश्वरों के मानदण्ड से मिलता है। वह कभी गलत लोगों का साथ नहीं करता है। कंठी-माला, जटा-जूट वेश-भूषा बनाकर हम औघड़ हो सकते हैं तो बात नहीं है। ऐसे लोग लीचड़ हो सकते हैं, औघड़ नहीं। वह लीचड़ों की तरह काम, लीचड़ों के तरह आचरण-व्यवहार कर सकते हैं, उस गन्दे स्वभाव के लोगों के साथ बैठ सकते हैं। सज्जनों का साथ, महापुरुषों के साथ उनका कभी नहीं हो सकता हैं उस तरह का उनका बुद्धि-विचार कभी नहीं हो सकता है। जो व्यक्ति समाज और राष्ट्र के प्रति अपने उत्तरदायित्व को नहीं समझता है, उसके साथ विश्वासघात करता है, वह कैसे भगवत भक्त हो सकता है? (कैसे) ईश्वर अनुरागी हो सकता है? कैसे वह आदर्श-पुरुष हो सकता है?

हम सोचतें हैं कि भगवान का दर्शन करने से हमारा अपराध क्षमा हो जायेगा, जिसकी बिल्कुल भी सम्भावना नहीं है। यदि हम अपराध करते रहें और न्यायमूर्ति का रोज ही दर्शन करते रहे तो क्या हमारा अपराध क्षमा होगा? हमारा अपराध तो तभी क्षमा होगा जब हम अपनी तरफ से अपराध से बिल्कुल विमुक्त हो जायें। नहीं तो भगवान, भगवती, ईश्वर किसी का दर्शन करके क्षमा नहीं हो सकता। चाहे हम पाप कर्म करते हों, चाहे पुण्य कर्म करते हों- दोनों कर्मों का फलाफल भोगना पड़ता हैं। इसीलिए औघड़-अघोरेश्वरों का एक ही रस है जैसे सागर में लवण है। एक ही धारण है, एक ही रस है कि हम इससे विमुक्त होंगे। यही रस है जिसके चलते रहने के लिए प्रयत्न करते हैं, इसी की तरफ उनकी बराबर चेतना बनी रहती है।

आपने क्रीं-कुण्ड के बारे में बताते हुए कहा कि- इस कुण्ड (क्रींकुण्ड) के बारे में लोग कह रहे थे कि इसमें महात्माओं का आशीर्वाद है। यह आशीर्वाद हैं क्या चीज? बहुत से लोग हैं जो कहते-फिरते हैं कि तुम्हारा कल्याण हो। ऐसे जुबान से कहेंगे तो वह आशीर्वाद नहीं होगा। उन महापुरुष जिनका, इस राष्ट्र के प्रति, इस समाज के प्रति उत्तरदायित्व था, जिन्होंने किसी के प्रति कोई घृणा, द्वेष, ईर्ष्या नहीं रखी, चाहे वह किसी भी जाति, धर्म, राष्ट्र का हो। जो करुणा, दया, मैत्री इस तरह के विचार धारा वाले व्यक्ति हैं, भले ही वो ज्यादा पढ़े न हों, घर त्यागे न हों, वह सज्जन उन गुणों को प्राप्त कर उन अणुओं को प्राप्त करते हैं और वह दैवीय गुण बहुत छोटे-छोटे कणों में एकत्रित रहते हैं। जब वह महापुरुष भावावेश में होकर कुछ कह देते हैं, साधु का हृदय भीतर से द्रवित हो गया (किसी लोभ-लालच वश नहीं) तो उस हृदय से, उस मनोभाव से, उस मनोदशा से जो अभिव्यक्त करते हैं, वह तत्काल होता है (और) उसी स्थिति में होकर इस क्रींकुण्ड के लिए आशीर्वाद दिये होंगे, तभी तो सैकड़ों सालों से बहुत लोगों, बहुत से प्राणियों का कल्याण हुआ।

क्रीं-कुण्ड बाबा कीनाराम स्थल की, गरिमा का वर्णन करते हुए पूज्य अघोरेश्वर जी ने कहा कि यहाँ बहुत ओझा, सोखा का भी आये होंगे जो हमारे आपकी वेशभूषा में ही होंगे। यहाँ पर भूत बाँधते गाड़ते होंगे, अच्छत छिड़कते होंगे, गुप्त रूप से काम करते होंगे। उनकी धारणा यही है, वह भी सफल हो जाती है तो जिनकी शुद्ध भावना है वह तो फलीभूत होती ही है। (यह) इस भूमि की, इन महापुरुषों की तपस्या का प्रभाव है। इस अन्तरिक्ष में जो महापुरुष हैं, उनका भी संसर्ग हो जाता है और उन लोगों का भी होता है जो अपनी नैतिकता, अपने दायित्व को समझते हैं। आपके यहाँ कहा गया है "मसक समान रूप कपि धरऊ"- तो बहुत से महापुरुष कीट-मच्छर के शरीर में प्रवेश करके बहुत से महात्मा आप लोगों के बीच यहाँ आते हैं। बहुत से अघोरेश्वर गृह त्याग कर चुके हैं, बहुत से गृहत्यागी भी नहीं है पर वे अपने को बहुत ऊँचे स्थान पर देखते हैं। उन्हें किसी के मान सम्मान की आवश्यकता नहीं।

अघोर सन्देश

मातायें जो सिन्दूर लगाती हैं, वह शक्ति का प्रतीक है। सूर्यास्त होने के बाद इसे कभी भी दूसरे के घर नहीं दिया जाता है। चतुर बनिया भी इसे सूर्यास्त होने के बाद नहीं बेचते हैं क्योंकि यह लक्ष्मी का स्वरूप है। सूर्य जब ढल रहा होता है तब भी इसे एक घर से दूसरे घर नहीं दिया जाता है। ऐसा करने का अर्थ है अब मैं अपने पूज्य को, अपने पति या परमेश्वर को गँवाने वाली हूँ।

-अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान राम जी महाराज

अघोर सूत्र

☞ **आपको भी चाहिये किसी मंत्र, किसी विद्या, किसी देवता की बात, जब तक कोई न पूछे तब तक किसी को नहीं बतलाना चाहिये और गुरु के बारे में बिल्कुल नहीं बताना चाहिये।**

अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजी